"वैश्वीकरण एवं भारत में सामाजिक न्यायः अम्बेडकरनगर के अनुसूचित जाति का अध्ययन– 2000–2010"

बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, लखनऊ से
राजनीति विज्ञान विभाग विषय में पीएच0डी0
उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध–प्रबन्ध

BABASAHEB
BHIMRAO
AMBEDKAR
UNIVERSITY
LUCKNOW
प्रज्ञा शील करुणा
ESTABLISHED 1996

शोध पर्यवेक्षक
प्रो0 रिपु सूदन सिंह
राजनीति विज्ञान विभाग
अम्बेडकर अध्ययन विद्यापीठ
बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय
(केन्द्रीय विश्वविद्यालय), लखनऊ

शोधकर्ता
रामसूरत हरिजन
राजनीति विज्ञान विभाग
अम्बेडकर अध्ययन विद्यापीठ
बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय
(केन्द्रीय विश्वविद्यालय), लखनऊ

बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय
(केन्द्रीय विश्वविद्यालय)
अम्बेडकर अध्ययन विद्यापीठ
लखनऊ–226025
2017

शोध–सारांश

प्रस्तुत शोध का शीर्षक **"वैश्वीकरण एवं भारत में सामाजिक न्यायः अम्बेडकरनगर के अनुसूचित जाति का अध्ययन– 2000–2010"** है। यह शोध छः अध्यायों में विभाजित है।

इन अध्यायों में वैश्वीकरण एवं सामाजिक न्याय की वैकश्विक परिप्रेक्ष्य में व्याख्या की गई है। अम्बेड़करनगर तथा भारत के विशेष संदर्भ में मानव विकास की अवस्था का विस्तारपूर्वक आकलन प्रस्तुत किया गया है। साथ ही जहाँगीरगंज एवं भियाँव ब्लॉक का सर्वे के माध्यम से उत्तरदाताओं का व्यक्तिगत विवरण लिया गया है। वैश्वीकरण व उदारीकरण के दौर में अनुसूचित जातियों का मानव विकास सूचकांक में शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार के अवसरों में कितना बदलाव आया है। भारत में उदारीकरण ने भारतीय अर्थव्यवस्था को बदल कर रख दिया है। वैश्वीकरण के दौर में उदारीकरण का प्रभाव अम्बेडकर नगर के अनुसूचित जातियों को बाजार व्यवस्था से इन्हें कितना लाभ हुआ है। अम्बेडकर नगर जनपद के सन्दर्भ में आलोचनात्मक, निष्पक्ष एवं वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

वैश्वीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जो पूरे विश्व को एकीकृत करती है। इस प्रक्रिया के माध्यम से सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, भौगोलिक, व राजनैतिक दृष्टिकोण से मानवीय सम्बंधो के बीच एक दूसरे को आपस में जोडने का कार्य करती है। इस व्यवस्था ने वैश्वीकृत विश्व में मानवीय स्वभाव की गतिविधियो में अमूलचूल परिवर्तन लाया, एक देश की संस्कृति को दूसरे देशो में भी पसन्द की जाने लगी है, एक देश दूसरे देश को व्यापार, वाण्ज्य व निवेश के अवसर एक दूसरे को उपलब्ध करा रहे है। दूसरी तरफ वैश्वीक स्तर पर भौगोलिक दूरिया सिमट रहीं है। साथ ही एक देश से दूसरे देश के बीच कूटनीतिक व राजनैतिक संबंधों में मधुरता आ रही है।

भारत में भूमण्डलीकरण का प्रारम्भ व आर्थिक सुधारों की प्रक्रिया राजीव गांधी के पद सम्भालने के बाद वर्ष 1980 में हुई। इन सुधारों को वर्ष 1991 में पी0वी0 नरसिंह राव

की सरकार के सत्ता सम्भालने के बाद सुव्यवस्थित रूप प्रदान करने का प्रयास किया गया, और इसे ही आर्थिक सुधारों के नाम से सम्बोधित किया गया। उदारीकरण अथवा आर्थिक सुधारों के अन्तर्गत सार्वजनिक क्षेत्र को सीमित करके निजी क्षेत्र को बढ़ावा देने, उत्पादन प्रक्रिया में सुधार लाने तथा आधुनिक तकनीकि को आत्मसात करने तथा उपलब्ध क्षमताओं का भरपूर प्रयोग करने हेतु लाइसेन्स प्रणाली को सरल बनाने के लिए कई महत्वपूर्ण उपायों को अमली जामा पहनाया गया।

सामाजिक न्याय

सामाजिक न्याय शब्दावली से सामाजिक, राजनैतिक व आर्थिक न्याय का बोध होता है। सामाजिक न्याय का तात्पर्य यह है कि सामाजिक जीवन में सभी मनुष्यों की गरिमा स्वीकार किया जाये। शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार व उन्नति के अवसर सभी को समान रूप से सुलभ हो तथा संस्कृति व तकनीकी संसाधनों का उपयोग और उपभोग किया जा सके। जहां विभिन्न पक्षों के परस्पर विरोधी दावों पर विचार किया जाता है। वहाँ सामाजिक न्याय का विचार निर्धन व निर्बल पक्ष का विशेष सहायता और संरक्षण प्रदान करने की मांग करता है।

सामाजिक न्याय का सम्बन्ध व्यक्ति के अधिकारों तथा सामाजिक नियंत्रण के बीच सन्तुलन से है। जो प्रचलित कानूनों के अन्तर्गत व्यक्ति की वैध आकांक्षाओं की पूर्ति को सुनिश्चित करें। और उसे उसके अन्तर्गत लाभों तथा राष्ट्र की एकता एवं समाज की आवश्यकता के अनुकूल उसके अधिकारों के किसी उल्लंघन या अतिक्रमण के विरुद्ध सुरक्षा का आश्वासन दे।

भारतीय आर्थिक व विदेशी नीति में इस तरह के आमूल–चूल बदलाव ने भारत में दुनिया का भरोसा बढ़ाया। इसने न सिर्फ भारतीय कारोबारियों को नए निवेश के लिए प्रेरित किया, बल्कि भारत की विकास दर को भी आगे बढ़ाया। भारत की राष्ट्रीय आय में साल 1900–1950 के बीच जहां लगभग सालाना शून्य की दर से, 1950–1980

के बीच 3.5 फीसदी सालाना की दर वृद्धि हुई थी, वहीं साल 1991–2015 के बीच भारतीय अर्थव्यवस्था करीब सात फीसदी सालाना की दर से बढ़ी।

सामाजिक न्याय की अवधारणा बहुत व्यापक है जो समाज के दबे–कुचलों के हितों की रक्षा से लेकर गरीबी तथा निरक्षरता के उन्मूलन तक समान हित से सम्बन्ध रखने वाली प्रत्येक वस्तु को समेट लेती है। यह न केवल कानून के समक्ष समानता तथा न्याय पालिका की स्वतंत्रता के सिद्धान्त के पालन से सम्बन्धित है। जैसा कि पश्चिम के विकसित देशों में देखते है। बल्कि इनका सम्बन्ध विकट सामाजिक बुराईयों जैसे निर्धनता, बीमारी, बेरोजगार तथा भूख के उन्मूलन से भी है, जो विकासशील देशों की काली छाया को दर्शाती है। इसके अतिरिक्त सम्बन्ध उन निहित स्वार्थों की समाप्ति से ही है। जो सामान्य कल्याण की सिद्धि में बाधा डालती है। तथा उनका ही अपने लाभ के लिए यथा स्थिति को बनाये रखने में है। ऐसी स्थिति में विश्व के पिछड़े देशों में सामाजिक न्याय का विचार राज्य पर यह दायित्व डालता है कि दलितों तथा समाज के कमजोर वर्गों की दशा सुधारने के लिए ठोस प्रयत्न करें। इसका क्षेत्र अधिक विस्तृत हो जाता है। जिसमें लोगों की जीवन का आर्थिक पक्ष भी समाहित हो जाता है। ताकि श्रमिक वर्ग का शोषण न हो सके।

सामाजिक न्याय शब्दावली से सामाजिक, राजनैतिक व आर्थिक न्याय का बोध होता है। सामाजिक न्याय का तात्पर्य यह है कि सामाजिक जीवन में सभी मनुष्यों की गरिमा स्वीकार किया जाये। शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार व उन्नति के अवसर सभी को समान रूप से सुलभ हो तथा संस्कृति व तकनीकी संसाधनों का उपयोग और उपभोग किया जा सके। जहां विभिन्न पक्षों के परस्पर विरोधी दावों पर विचार किया जाता है। वहाँ सामाजिक न्याय का विचार निर्धन व निर्बल पक्ष का विशेष सहायता और संरक्षण प्रदान करने की मांग करता है।

सामाजिक न्याय का सम्बन्ध व्यक्ति के अधिकारों तथा सामाजिक नियंत्रण के बीच सन्तुलन से है। जो प्रचलित कानूनों के अन्तर्गत व्यक्ति की वैध आकांक्षाओं की

पूर्ति को सुनिश्चित करें। और उसे उसके अन्तर्गत लाभों तथा राष्ट्र की एकता एवं समाज की आवश्यकता के अनुकूल उसके अधिकारों के किसी उल्लंघन या अतिक्रमण के विरुद्ध सुरक्षा का आश्वासन दे।

भारतीय आर्थिक व विदेशी नीति में इस तरह के आमूल–चूल बदलाव ने भारत में दुनिया का भरोसा बढ़ाया। इसने न सिर्फ भारतीय कारोबारियों को नए निवेश के लिए प्रेरित किया, बल्कि भारत की विकास दर को भी आगे बढ़ाया। भारत की राष्ट्रीय आय में साल 1900–1950 के बीच जहां लगभग सालाना शून्य की दर से, 1950–1980 के बीच 3.5 फीसदी सालाना की दर वृद्धि हुई थी, वहीं साल 1991–2015 के बीच भारतीय अर्थव्यवस्था करीब सात फीसदी सालाना की दर से बढ़ी।

सामाजिक न्याय की अवधारणा बहुत व्यापक है जो समाज के दबे–कुचलों के हितों की रक्षा से लेकर गरीबी तथा निरक्षरता के उन्मूलन तक समान हित से सम्बन्ध रखने वाली प्रत्येक वस्तु को समेट लेती है। यह न केवल कानून के समक्ष समानता तथा न्याय पालिका की स्वतंत्रता के सिद्धान्त के पालन से सम्बन्धित है। जैसा कि पश्चिम के विकसित देशों में देखते है। बल्कि इनका सम्बन्ध विकट सामाजिक बुराईयों जैसे निर्धनता, बीमारी, बेरोजगार तथा भूख के उन्मूलन से भी है, जो विकासशील देशों की काली छाया को दर्शाती है। इसके अतिरिक्त सम्बन्ध उन निहित स्वार्थों की समाप्ति से ही है। जो सामान्य कल्याण की सिद्धि में बाधा डालती है। तथा उनका ही अपने लाभ के लिए यथा स्थिति को बनाये रखने में है। ऐसी स्थिति में विश्व के पिछड़े देशों में सामाजिक न्याय का विचार राज्य पर यह दायित्व डालता है कि दलितों तथा समाज के कमजोर वर्गों की दशा सुधारने के लिए ठोस प्रयत्न करें। इसका क्षेत्र अधिक विस्तृत हो जाता है। जिसमें लोगों की जीवन का आर्थिक पक्ष भी समाहित हो जाता है। ताकि श्रमिक वर्ग का शोषण न हो सके।

भारत में प्राचीन हिन्दू मान्यताओं के अनुसार समाज में चार प्रमुख वर्ग होते हैं। ये हैं– ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र। इन वर्गों में से प्रत्येक की एक विशिष्ट पदसोपानिक

स्थिति होती है। जाति व्यवस्था में ब्राह्मण सबसे ऊपर आते हैं। तत्पश्चात् क्रमशः क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र आते हैं। सामाजिक पदसोपान में शूद्र सबसे नीचे माने जाते थे तथा इनमें से कुछ को अछूत भी माना जाता था। भारतीय संविधान में जातीय व्यवस्था के नकारात्मक प्रभावों को दूर करने के लिए संविधान को सामाजिक न्याय, स्वतंत्रता, समानता और भ्रातृत्व के सिद्धान्तों पर आधारित किया है। भारत में जाति आधारित विभेद का कानून द्वारा उन्मूलन किया गया है। परन्तु इसके पश्चात् भी भारत के आर्थिक व सामाजिक जीवन का कोई ऐसा क्षेत्र नहीं है जिसे जातिवाद ने प्रभावित न किया हो।

वर्ष 2010 के अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की रिपोर्ट में कहा गया है कि भारत में सकारात्मक कार्यवाही से दलितों का एक छोटा सा हिस्सा ही रोजगार प्राप्त करने में सफल रहा है। अधिकतर दलित आज भी सामान्य अवसरों की प्राप्ति से दूर है। दलितों की एक बड़ी जनसंख्या को आज भी हिंसा तथा विभेदकारी घटनाओं के दैनिक अनुभवों से गुजरना पड़ता है, उदाहरण के लिए इस वर्ग के लोगों को घरों में प्रवेश न करने देना, इनको उत्पादन के कार्यों के एक बड़े क्षेत्र से बाहर रखना तथा इनको उच्च विशिष्ट कार्यों के योग्य ही न मानना प्रमुख है।

यदि भारत की भूमण्डलीकरण के प्रभाव का आकलन विश्लेषण किया जाये तो वर्ष 2000 से लेकर 2010 तक के सफर में कितना बदलाव आया है। भूमण्डलीकरण के दौर में क्या बाजार व्यवस्था समानता लाती है? क्या आर्थिक विकास की तीव्र गति ने समग्रता से विकास किया है? इस राजनीतिक, सामाजिक व आर्थिक विकास का भारतीय समाज पर क्या प्रभाव रहा है? विशेषकर अनुसूचित जाति के वर्गों पर क्या प्रभाव रहा है? भूमण्डलीकरण के युग में भारतीय समाज में अनुसूचित जाति का विकास सर्व समाज के विकास स्तर तक लाने में कहां तक सफल रहा है? इनके प्रत्येक क्षेत्र जैसे अनुसूचित जाति की साक्षरता का प्रतिशत क्या रहा है? इन्हें रोजगार के अवसर कहां तक उपलब्ध हो पाये हैं? स्वास्थ्य सुविधाओं में इनकी भागीदारी कहां तक हो

पायी है? महिलाओं व बच्चों का विकास स्तर क्या रहा है? इनका प्रतिव्यक्ति आय किताना है? इनका लिंगानुपात कितना है? इनकी वार्षिक वृद्धि दर, दशकीय वृद्धि दर तथा जीवन प्रत्याशा क्या है?

वैश्वीकरण और सामाजिक न्याय के दौर में अनुसूचित जाति की समस्या गम्भीर समस्या बनती जा रही है। 1991 के बाद से भारत में निजीकरण एवं उदारीकरण की प्रक्रिया ने अनुसूचित जाति का जीवन असहाय तथा मजबूर बनता दिख रहा है। आज इनकी निम्नलिखित समस्यायें हैं–

1. स्वास्थ्य से हमारा तात्पर्य केवल बीमारियों का न होना ही नहीं, बल्कि यह अपनी कार्य क्षमता प्राप्त करने की योग्यता भी है। यद्यपि 20वीं शताब्दी के इतिहास में उत्कृष्ट मानव स्वास्थ्य के वैश्विक रूपान्तरण को देखा है। फिर भी किसी राष्ट्र की स्वास्थ्य दशा की माप को किसी एक इकाई के रूप में परिभाषित करना कठिन है। आमतौर पर स्वास्थ्य का निर्धारण शिशु मृत्यु दर और मातृत्व मृत्यु दर, जीवन प्रत्याशा और पोषण के स्तर के साथ–साथ संक्रामक और असंक्रामक रोगों की घटनाओं को सूचित करते हैं। स्वास्थ्य सुविधाओं में इनकी पूर्ण भागीदारी सुनिश्चित नहीं हो पा रही है।
2. सामुदायिक केन्द्रों में स्वास्थ्य की लाचार स्थिति से डेंगू, मलेरिया, मस्तिष्क ज्वर, इन्सेफलाइटिस कालरा इनके लिए जान लेवा साबित हो रहे हैं। क्योंकि इनकी इतनी आय नहीं कि वे प्राइवेट अस्पताल में दाखिला लेकर निजात पाये जो थोड़े अस्पताल है भी वे उसके निवास स्थान से दूर होने के कारण स्वास्थ्य सुविधाओं का लाभ नहीं उठा पाते हैं। या जानकारी ही नहीं होती है। यदि होती भी है तो वहाँ ले आने ले जाने में हिचक सी महसूस करते हैं, कारण धनाभाव। भारत सरकार भी उनके स्वास्थ्य के प्रति सचेत नहीं हैं जिसके कारण ये अनुसूचित जाति के लोग उपेक्षा की दृष्टिकोण से दिखते नजर आते हैं। प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों पर अक्सर डॉक्टरों की कमी होती है, तथा अक्सर मौके

पर डॉक्टर मौजूद नहीं होते यदि होते भी हैं तो लापरवाह और गैर–जिम्मेदराना जैसी स्थिति देखने को मिलती है।

3. भारत में शिक्षा का पिरामिड बहुत ही नुकीला है। जो दर्शाता है कि उच्चतर शिक्षा स्तर तक बहुत कम लोग पहुंच पाते हैं। यही नहीं शिक्षित युवाओं की बेरोजगारी दर भी उच्चतम है। राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन के आंकड़ों के अनुसार (माध्यमिक या उससे अधिक) शिक्षा प्राप्त युवाओं में वर्ष 2000 में बेरोजगारी दर 7.1 प्रतिशत थी जबकि केवल प्राथमिक शिक्षा प्राप्त वर्ग में बेरोजगारी मात्र 1.2 प्रतिशत पायी गयी। अतः सरकार को उच्च शिक्षा के लिए अधिक धन आवंटन करना चाहिए तथा उच्च शिक्षा संस्थानों के स्तर में सुधार लाना चाहिए ताकि पढ़ रहे छात्र रोजगार योग्य कौशल प्राप्त कर सकें। जब कम पढ़े लिखे लोगों से तुलना की जाती है, तो शिक्षित लोगों का एक बड़ा अनुपात बेरोजगार है। क्यों? शिक्षा का अभाव 2011, में साक्षरता दर में बढ़ोत्तरी भले देखने को मिलती है। लेकिन उस औसत से इनकी शिक्षा का स्तर बहुत नीचा है। ग्रामीण पृष्ठभूमि में शैक्षणिक अध्ययन से इन्हें जागरुक व रोजगार परक व्यावसायिक शिक्षा व तकनीकी शिक्षा की कमी के कारण इनका जीवन पढ़े–लिखे गंवारों जैसा हो चुका है।

4. नेटवर्किंग प्रशिक्षण हेतू कम्प्यूटर शिक्षा निःशुल्क एव अनिवार्य होनी चाहिए क्योकिं भारत में इन्टरनेट की सुविधा प्रतिव्यक्ति बहुत कम है। केवल 83 फीसदी लोगों के पास ही मोबाइल है। भारत में इंटरनेट स्पीड के मामले में 5.5 सेकेंड औसत समय भारत में पेजलोड होता है। वहीं चीन में 2.6 सेकेंड में पेजलोड होता है। विश्व रैंकिंग में भारत पेजलोड के मामले में 138वें स्थान पर है। जबकि अमेरिका पहले ब्रिटेन पांचवें स्थान पर है। हम प्रत्येक स्तर पर डिजिटल इन्डिया की बात करते है तो हमें आकाश में तारे गिनने के समान लगने लगता है क्योकि हमारी तैयारी अधूरी इसके लिए केन्द्र व राज्य सरकारो को निःशुल्क कम्प्यूटर प्रशिक्षण केन्द्र पूरे देश में हर पॉच किलोमीटर पर होना

अनिवार्य बनाने की बहुत आवश्यकता है जिसमें समाज का प्रत्येक वर्ग के स्त्री–पुरूष व खास कर गरीब, शोषित, तथा हाशिए के समाज को ज्यादा ध्यान देना होगा ताकि कोई व्यक्ति वंचित होकर देश के लिए बागी न बने बल्कि देश को अपना ही देश उसे भी महसूस होना चाहिए।

एतिहासिक पृष्ठभूमि (Historical Background)

जवाहर लाल नेहरू के समय में हमारी अर्थव्यवस्था नियन्त्रि अर्थव्यवस्था थी। पंचवर्षीय योजनाएं पूरी ताकत से चलायी जा रहीं थीं। नवोदित स्वतंत्र भारत में गरीबी, बेरोजगारी, भुखमरी एवं स्वास्थ्य सुविधाओं की लचर स्थिति को देखते हुए वे चाहते थे कि इस व्यवस्था के माध्यम से भारत में औद्योगिक आधुनिकीकरण को सफलता से लाया जा सके। बाहरी कर्ज का संकट वर्ष 1991 में सामने आया। भारत ने विदेशों से जो कर्ज लिया था उसका भुगतान समय पर नहीं हो सका। बाकी किस्तों का अम्बार लग गया, हुआ यह था कि वर्ष 1980 से हम बराबर घाटे के बजट पर चल रहे थे। केन्द्रीय राजस्व से जो आय होती थी वह खर्च की तुलना में बहुत कम थी। परिणाम स्वरूप हम विदेशों से लिए गये कर्ज की किस्तों को चुकाने में असफलल रहे। इधर भारत सरकार ने कई आन्तरिक संगठनों से भी कर्ज ले रखा था। बाहरी और आन्तरिक दोनों कर्ज बढ़ गये और तब पता लगा कि हमारी आर्थिक नीति में ही कोई न कोई कमी है। इस कर्ज से उबरने के लिए सरकार ने वर्ष 1991 में वैश्वीकरण की अर्थव्यवस्था को अपनाया।

भारत ने जब से वैश्वीकरण एवं उदारीकरण को अंगीकार किया है तब से जो प्रगति हुई है उसकी प्रशंसा इस श्रृंखला की एक कड़ी भर है जो कि फोर्ब्स की सूची में भारतीय अमीरों की तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या यह ज्ञात है कि फोर्ब्स की सूची की पांच से दस करोड़ प्रतिमाह वेतन पाने वाले मेधावियों की उपस्थिति दर्शाती है परन्तु वास्तविकता यह है कि तरक्की उतनी सपाट नहीं जितनी की बतायी जा रही है। वरन् यह बहुत से अन्तर्विरोधों से भरी पड़ी है। इसलिए सबसे अहम सवाल यह उठता

है कि क्या यह तरक्की दुनिया को सामाजिक न्याय मुहैया कराने में समर्थ है? या अमीर–गरीब की खाई को और चौड़ा करने में अपना महत्वपूर्ण योगदान कर रहा है।

दरअसल, वैश्वीकरण के शुरू होने के साथ ही कल्याणकारी राज्य की अवधारणा गौण होने लगी थी। गांव में बसने वाले किसानों, मजदूरों, शिल्पकारों सहित गरीब आबादी को उसके भाग्य पर छोड़ दिया गया। बढ़ती मंहगाई और बेरोजगारी के बीच जैसे–जैसे अमीरी–गरीबी का फासला बढ़ता गया वैसे–वैसे किसानों की गरीबी, भुखमरी, आत्म हत्या से मौत और सामाजिक विषमता जैसी कुप्रवृत्तियां बढ़ती जा रही है। या यों कहें कि सामाजिक न्याय का सिद्धान्त अप्रभावित होता जा रहा है। संयुक्त राष्ट्र संघ वर्ष 2009 से पूरी दुनिया में सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने के लिए 20 फरवरी को सामाजिक न्याय दिवस के रूप में मना रहा है इससे कोई खास प्रगति हो पायेगी या फिर केवल परम्परा के तौर पर निभाया जायेगा। यह तो आने वाला कल ही इसकी पुष्टि करेगा। जिसे इस शोध पत्र के माध्यम से दर्शाने का प्रयास किया जायेगा।

यदि भारत की स्थिति पर गौर करें तो यहां एक बड़ा अन्तर्विरोध यह दिखाई देता है कि जहां एक तरफ सरकार उच्च आर्थिक विकास को प्राप्त कर रही है वहीं दूसरी तरफ देश का एक बड़ा हिस्सा इस विकास के लाभों से कोसों दूर है। जिसके कारण जो गरीब हैं वो और गरीब होते जा रहे हैं। जो अमीर है वह और अमीर होते जा रहे हैं। ट्रिकल डाउन सिद्धान्त (उच्च, मध्य, निम्न) पूरी तरह से फेल हो रहा है। कल्याणकारी राज्य की अवधारणा धीरे–धीरे गौण होती जा रही है। इस वजह से आर्थिक उत्पादन की अपेक्षो, वितरण की समस्या पैदा होती जा रही है क्योंकि भारत में मूल समस्या अब केवल उत्पादन की नहीं है बल्कि इसके साथ–साथ समान वितरण की भी है। सरकार यह भूलती जा रही है कि पूंजीवाद, समाजवाद या कोई अन्य अवधारणा साधन मात्र है, साध्य नहीं। साध्य तो समग्र समाज के विकास में निहित है जिससे सामाजिक आर्थिक न्याय उपलब्ध हो सके।

संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम की मानव विकास रिपोर्ट की तर्ज पर भारत की पहली मानव विकास रिपोर्ट को तत्कालीन प्रधानमंत्री अटल बिहारी बाजपेयी ने 23 अप्रैल 2002 को नई दिल्ली में जारी किया। भारत की वर्ष 2010 की मानव विकास रिपोर्ट 04 नवम्बर 2010 को नई दिल्ली में जारी की गई। रिपोर्ट के अनुसार पिछले दशक में तेज आर्थिक संवृद्धि दर के कारण भारत सबसे अधिक सकल घरेलू उत्पाद में संवृद्धि दर प्राप्त करने वाले दुनिया के शीर्ष दस देशों में शामिल हो चुका है। मानव विकास सुचकांक 2010 में 169 देशों के बीच भारत का स्थान 119वां है। मानव विकास सूचकांक के मामले में भारत अपने पड़ोसी देशों बांग्लादेश और पाकिस्तान से आगे है लेकिन चीन और श्रीलंका से पीछे है। मानव विकास सूचकांक का आंकलन जीवन प्रत्याशा, वयस्क साक्षरता दर, स्कूलों में पंजीकरण के कुल अनुपात और प्रति व्यक्ति आय मानकों पर निर्भर करता है। रिपोर्ट के अनुसार भारत में जीवन प्रत्यासा 64.4 वर्ष है जबकि पूरे विश्व की औसत जीवन प्रत्याशा 69.3 वर्ष है। चीन की जीवन प्रत्याशा 73.5 वर्ष है। नार्वे, आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैण्ड जैसे देशों की जीवन प्रत्याशा 80 वर्ष है। वैश्विक भूख सूचकांक 11 अक्टूबर 2010 को जारी किया गया जिसमें 84 देशों के अध्ययन करने के बाद भारत को 67वां स्थान प्राप्त हुआ जिसमें साक्षरता एवंज न स्वास्थ्य सुविधाएं और स्वच्छ पेय जल की उपलब्धता जैसी सामाजिक विकास के मानकों पर भारत अन्य देशों की तुलना में बहुत पीछे है।

भारत के निर्धनता अनुपात में लगातार कमी के दावों के बावजूद देश में निर्धनता की स्थिति चिन्ताजनक है। निर्धनता की जांच के लिए संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम के एक नए सूचकांक मल्टी डाईमेंशन पॉवर्टी इनडेक्स के आधार पर यह पाया गया कि भारत के आठ राज्यों में ही निर्धनों की कुल संख्या अफ्रीका के 26 निर्धनतम देशों में निर्धनों की कुल संख्या से अधिक है ये भारतीय राज्य हैं–बिहार, उत्तर प्रदेश, छत्तीसगढ़, झारखण्ड, मध्य प्रदेश, राजस्थान, पश्चिम बंगाल, उड़ीसा। इन आठ राज्यों में निर्धनों की कुल संख्या 42.1 करोड़ है जबकि अफ्रीका के 26 निर्धनतम देशों में कुल मिलाकर यह संख्या 41 करोड़ ही है। हाल ही में सुरेश तेन्दूलकर की अध्यक्षता वाली

समिति ने निर्धनता रेखा के निर्धारण हेतु अपने फार्मूले में उपभोग व्यय को आधार बनाते हुए इसे अधिक व्यावहारिक बताया। जीवन हेतु आवश्यक सामाग्री के तहत 'बास्केट ऑफ मिनिमम लिस्ट' उपभोग व्यय में शामिल किया गया है। तेन्दूलकर समिति ने इस फार्मूले के आधार पर 2004–05 में देश में 27 प्रतिशत के स्थान पर 32. 2 प्रतिशत जनसंख्या को निर्धनता रेखा से नीचे माना है। ग्रामीण क्षेत्रों में 2004–05 में यह अनुपात 41.8 प्रतिशत पाया गया है जो पहले 28.3 प्रतिशत आंकलित था। तेन्दूलकर समिति ने कास्ट ऑफ लिविंग को निर्धनता की पहचान के लिए आधार स्वीकार किया गया जिसे भोजन में प्रतिदिन शहरी क्षेत्रों में 2100 कैलोरी व ग्रामीण क्षेत्रों में 2400 कैलोरी न पाने वाले को निर्धनता रेखा से नीचे माना जाता है।

शोध कार्य का क्षेत्र

शोधार्थी द्वारा अपने शोध कार्य के विषय **"वैश्वीकरण एवं भारत में सामाजिक न्यायः अम्बेडकरनगर के अनुसूचित जाति का अध्ययन– 2000–2010"** है। के अन्तर्गत अध्याय–5 में सर्वप्रमुख रूप से वैश्वीकरण के दौर में मानव विकास सूचकांक में अनुसूचित जातियों की स्थिति क्या रही है।

शोधार्थी द्वारा अम्बेडकर नगर जिले के जहागीरगंज एवं भियाव ब्लॉक के अर्न्तगत 200 उत्तरदाताओं से उनकी समस्याओं जैसे, स्वास्थ्य, शिक्षा, रोजगार, व गरीबी के बारे में 100 प्रतिवादी से प्रश्नोत्तर किया गया, जिसमें उन्होंने अपनी मूलभूत सुविधाओं के वारे में जानकारी दी । जिसमें शिक्षा से संबंधित प्रश्नों के उत्तर में वताया कि शिक्षक कभी–कभी अच्छा पढाते है सरकारी विद्यालय में शिक्षक अधिकांशतः अनुपस्थित रहते है। और शिक्षा की गुणवत्ता अच्छी नहीं है। कुछ लोगों का मानना है कि लापरवाह है जिसकी वजह से बच्चों को विषय का अच्छा ज्ञान नहीं हो पाता है। उच्चतर महाविद्यालय विद्यालय सोन्हू समैसा शिक्षा क्षेत्र जहाँगीरगंज ब्लॉक के अन्तर्गत आता है। इतिहास के अध्यापक से बच्चो ने प्रश्न किया तो एक भी बच्चा उत्तर नहीं दे

सका। इससे स्पष्ट होता है कि अध्यापक पूरी निष्ठा व ईमानदारी से नहीं पढाते बल्कि पारीवारिक ताने–बाने में लगे रहते है।

शोधार्थी द्वारा अपने शोध का क्षेत्र अम्बेडकर नगर जनपद लेने का कारण यह है कि चूँकि अम्बेडकर नगर जनपद शोधार्थी का गृह जनपद है। वहाँ निवास करने वाले अनुसूचित जाति के लोगों का जीवन स्तर अच्छा नहीं है। साथ ही वैश्वीकरण व उदारीकरण का प्रभाव अम्बेडकर नगर के अनुसूचित जाति पर कोई खास असर नही हुआ है। इन वर्गो की स्थिति काफी दयनीय है आज भी यह वर्ग वर्ष 2010 के अनुसार मानव विकास सूचकांक में काफी पिछड़ा हुआ है। इस प्रकार अम्बेडकर नगर जनपद के जहाँगीरगंज व भियाँव ब्लाँक में अनुसूचित जातियों की संख्या अधिक होने के कारण इसका चुनाव किया गया और वैश्वीकरण व उदारीकरण के दौर में इन वर्गो के पिछड़ने का क्या कारण है जबकि अनुसूचित जाति की अपेक्षाकृत अन्य वर्गो का विकास हुआ है। अतः शोधार्थी ने वैश्वीकरण व उदारीकरण के दौर में अनुसूचित जातियों को सामाजिक न्याय न मिल पाने के कारणों को जानने के लिए इस विषय परशोध कार्य करने का निर्णय किया।

शोध समस्या

- भारत में भूमण्डलीकरण और सामाजिक न्याय का तुलनात्मक अध्ययन करना।
- भूमण्डलीकरण और सामाजिक न्याय का भारतीय समाज पर क्या प्रभाव रहा है तथा उसके निहितार्थ एक दूसरे को कहा तक प्रभावित करते हैं।
- भूमण्डलीकरण के दौर में अनुसूचित जाति की स्थिति व विकास का विवरण प्रस्तुत करते हुए उत्तर प्रदेश के अम्बेडकर नगर जिले में दलित जाति का सामाजिक, राजनीतिक व आर्थिक न्याय का व्यापक रूप से विवरण प्रस्तुत करते हुए अध्ययन करना।

- क्या बाजार व्यवस्था समानता लाती है? यदि लाती है तो किन वर्गों को और किन–किन कारणों से लाभ हुआ है तथा कौन–कौन से वर्ग बाजार व्यवस्था के मुख्य धारा से वंचित हो रहे हैं और क्यों? का अध्ययन करना।
- भारत में अमीर–गरीब की खाई को बाजार व्यवस्था में बढ़ा दिया है। जिससे अमीर और अमीर तथा गरीब और गरीब होते जा रहे हैं, फलस्वरूप सामाजिक न्याय अप्रभावी हो रहा है, के कारणों का पता लगाना।
- अनुसूचित जाति का विकास एवं सामाजिक न्याय के समक्ष चुनौतियों से कैसे निपटा जाये का अध्ययन करना।
- वैश्वीकरण के पहले व वैश्वीकरण के बाद में भारतीय समाज तथा सामाजिक न्याय की क्या स्थिति रही है, का अध्ययन करना।

शोध पद्धति (Research methodology)

- प्रस्तुत शोध में ऐतिहासिक, विश्लेषणात्मक एवं तुलनात्मक पद्धति का प्रयोग किया जायेगा। इसके अन्तर्गत प्राथमिक एवं द्वितीयक श्रोतों से जानकारी एकत्रित करने का प्रयास किया जायेगा।
- प्राथमिक श्रोत के रूप में कुछ महत्वपूर्ण सामाजिक विद्वानों के साक्षात्कार के माध्यम से जानकारी एकत्रित की जायेगी। द्वितीयक श्रोत में पुस्तक आर्टिकिल, जनरल्स, मैग्जीन, पत्र–पत्रिकाएं और इंटरनेट के माध्यम से जानकारी प्राप्त करने का प्रयास किया जायेगा।

शोध परिकल्पना (Hypothesis)

वैश्वीकरण के कारण बढ़ते आर्थिक अवसरों का समुचित लाभ अनुसूचित जातियों को नहीं मिला है। मानव विकास सूचकांक में अभी भी ये वर्ग काफी पिछड़े हैं। यथा साक्षरता दर, स्वास्थ्य मानकों पर रोजगार के अवसर।

मुख्य शोध निष्कर्ष

वैश्वीकरण के फैलाव से पूरे विश्व में निजीकरण व उदारीकरण की भागीदारी तेजी से बढ़ी है। जिसमें सार्वजनिक क्षेत्र को सीमित करके निजी क्षेत्र को अधिक से अधिक बढ़ावा दिया जा रहा है। जिससे सार्वजनिक क्षेत्र का कार्य क्षेत्र सीमित होता जा रहा है। वैश्वीकरण की मुख्य धारा में विश्व के अधिकतर देशों में वहां के उच्च वर्ग या धनवान वर्ग ही इस प्रक्रिया को चला रहा है और राजनीतिक सत्ता के माध्यम से ज्यादा से ज्यादा निजी क्षेत्र में अपने करीबी उद्योगपतियों को शामिल करके उसे अपने अनुकूल बनाकर समाज के हर एक कार्य को अपने तरीके से चलाने का कार्य किया जा रहा है। जिसमें साधन सम्पन्न वर्ग एक ऐसा वर्ग है जो वैश्वीकरण की मुख्यधारा से जुड़ा हुआ है इसके अलावा उसे सामाजिक ढांचे को चलाने का ठेका दिया जाता है। ऐसा ही एक वर्ग जो वैश्वीकरण की मार झेल रहा है। वह वैश्वीकरण की मुख्यधारा से बाहर है। जिसे न तो ठीक तरह से शिक्षा प्राप्त हो पा रहा है न ही उसे राजनीति में उसकी पूर्ण भागीदारी है न ही उसे रोजगार के अवसर ही मिल पा रहा है जिससे ये वर्ग वैश्विक सामाजिक व आर्थिक प्रवंचना का शिकार होता जा रहा है। वहीं गरीबी की हालत प्रतिशत में ठीक–ठाक आंकड़े दिखाये जा रहे हैं जबकि सर्वाधिक रूप में इनकी हालत काफी कुछ गम्भीर होती जा रही है।

शोध–परिकल्पना की जॉच

वैश्वीकरण व उदारीकरण के दौर में आज भी अनुसूचित जाति के विकास में कोई खास योगदान नही मिल पाया है। वैश्वीकरण के कारण बढ़ते आर्थिक अवसरों का समुचित लाभ अनुसूचित जातियों को नहीं मिला है। मानव विकास सूचकांक में अभी भी ये वर्ग काफी पिछड़े आ हैं। क्योकि अम्बेडकर नगर के अनुसूचित जाति आज भी सामाजिक व आर्थिक क्षेत्रों में काफी पिछड़ा हुआ है। रोजगार, शिक्षा, व स्वास्थ्य के क्षेत्रों में बहुत अच्छा बदलाव नही हुआ है। जिसका मुख्य कारण भारत की सामाजिक संरचना है।

भारत में प्राचीन हिन्दू मान्यताओं के अनुसार समाज में चार प्रमुख वर्ग होते हैं। ये हैं– ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र। इन वर्गों में से प्रत्येक की एक विशिष्ट पदसोपानिक स्थिति होती है। जाति व्यवस्था में ब्राह्मण सबसे ऊपर आते हैं। तत्पश्चात् क्रमशः क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र आते हैं। सामाजिक पदसोपान में शूद्र सबसे नीचे माने जाते थे तथा इनमें से कुछ को अछूत भी माना जाता था। भारतीय संविधान में जातीय व्यवस्था के नकारात्मक प्रभावों को दूर करने के लिए संविधान को सामाजिक न्याय, स्वतंत्रता, समानता और भ्रातृत्व के सिद्धान्तों पर आधारित किया है। भारत में जाति आधारित विभेद का कानून द्वारा उन्मूलन किया गया है। परन्तु इसके पश्चात् भी भारत के आर्थिक व सामाजिक जीवन का कोई ऐसा क्षेत्र नहीं है जिसे जातिवाद ने प्रभावित न किया हो।

इस प्रकार सामाजिक व आर्थिक स्तर पर यह वर्ग आज भी दबाया व कूचला जाता है। जातिवादी मानसिकता ने समाज के शोषित वर्गो को आगे बढ़ने से रोकते है। वर्णवादी व्यवस्था का शिकार सामाजिक व आर्थिक रूप से बनाया जा रहा है। क्योकि जाति का सम्बन्ध धर्म से है इसलिए धर्म की पवित्रता को भंग करना सवर्ण की अस्मिता को भंग करना है। इस प्रकार अनुसूचित जाति के उत्पीड़न करने का आसान रास्ता सवर्णो को मिल जाता है। जिसके कारण इन वर्गो का शोषण व उत्पीडन आज भी सामाजिक व आर्थिक रूपो प्रिन्ट्र मिडिया, इलेक्ट्रानिक मिडिया, में पढने व देखने को मिल जाया करता है।